ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. No.- 144-147

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

भारतीय जातियों की उत्पत्ति के सिद्धांत : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

बोदन सिंह

सहायक आचार्य– समाजशास्त्र विभाग, हिन्दू कॉलेज, मुरादाबाद (उ0प्र0) भारत

Received-27.01.2023, Revised-02.02.2023, Accepted-07.02.2023 E-mail: bodansingh8@gmail.com

सारांशः ***जाति व्यवस्था भारतीय सामाजिक सरंचना की एक अनुपम और बहुचर्चित विशेषता है। भारत में जाति व्यवस्था सदियों से चली आ रही है। आज इसका जो आधुनिक स्वरूप (लगभग 4500 जातियाँ व उपजातियाँ) है। वह हजारों सालों के इतिहास को अपने में छुपाये हुए है। भारतीय जातियों की उत्पत्ति कैसे हुई, इसके बारे में अनेक मत और सिद्धांत प्रचलित है, लेकिन कोई भी सिद्धांत इसकी सही व्याख्या नहीं करता है। वर्तमान समय में समाजशास्त्रियों के जातियों की उत्पत्ति से संबंधित अनेक सिद्धांत प्रचलित है। जैसे दैवीय सिद्धांत, व्यावसायिक सिद्धांत, प्रजातीय सिद्धांत, धार्मिक सिद्धांत,राजनीतिक सिद्धांत,उद्विकास का सिद्धांत और हट्टन का सिद्धांत। इन्होंने जातियों की उत्पत्ति पर अपने–अपने विचार प्रस्तुत किये।***

कुंजीभूत शब्द– जाति ,उपजाति, मत, सामाजिक सरंचना, बहुचर्चित, हस्तांतरित, अप्रतिबंधित, निर्योग्यताएं, संस्तरण।

भारत में जाति व्यवस्था ने प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को गहराई से प्रभावित किया है। यह एक ओर भारतीय सामाजिक सरंचना की व्याख्या करती है, तो दूसरी ओर व्यक्तियों के व्यवहार को भी दर्शाती है। भारतीय समाज की सरंचना बहुत जटिल है। यदि हमें भारतीय समाज जाति व्यवस्था को समझना है, तो जाति की उत्पत्ति और इतिहास को जानना बहुत जरूरी है। हम इस शोध पत्र के जरिए भारतीय जातियों की उत्पत्ति से संबंधित अनेक सिद्धांतों का अध्ययन कर ये जानने का प्रयास करेंगे कि इन जातियों की उत्पत्ति के लिए उस समय विशेष की सामाजिक व्यवस्था कैसी रही होगी और इनकें विकास यात्रा में किन सामाजिक कारकों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा।

जाति का अर्थ एवं परिभाषा– जाति शब्द अंग्रेजी भाषा के 'Caste' का हिन्दी रूपांतरण है और 'Caste' शब्द की उत्पत्ति पुर्तगाली भाषा के शब्द 'Cast' (कास्टा) से हुई है, जिसका अर्थ प्रजाति ,नस्ल, या भेद होता है। इसके अलावा यह शब्द 'Castus' (कास्टस) जो लैटिन भाषा का शब्द है, के काफी निकट है, जिसका अर्थ विशुद्ध होता है। सबसे पहले सन 1665 में पुर्तगाल देश के ग्रेरिया–डि –ऑरेटा (Gracia de orta) ने जाति शब्द का प्रयोग भारत के सामाजिक समूहों के लिए किया। उनका यह मानना था कि यह जाति शब्द रक्त की शुद्धता को बनाए रखता है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होता रहता है। ए.आर वाडिया (A-R-Wadia) का मत है कि कास्ट शब्द लैटिन भाषा के 'कास्टस' से मिलता जुलता है जिसका अर्थ विशुध्द प्रजाति या नस्ल से होता है। हिन्दी का जाति शब्द संस्कृत भाषा की 'जन' धातु से बना है, जिसका अर्थ उत्पन्न होंना हैद्य बाद में फ्रांस के अब्बे डुबॉय ने जाति शब्द को प्रजाति विभेद के लिए प्रयोग किया।

साहित्य सर्वेक्षण– अनेक सामाजिक विचारकों और समाजशास्त्रियों ने जाति की उत्पति और इसके स्वरूप के बारें में अपने विचार प्रस्तुत किये है –

जी. एस. घूरिए (G.S.Ghurye) ने जाति के उद्भव और इसके स्वरूप का अपनी समाजशास्त्रीय पुस्तकों में वर्णन किया है। उन्होनें स्पष्ट लिखा है कि "भारत में जाति इंडो आर्यन संस्कृति के ब्राह्मणों का बच्चा है, जो कि गंगा और यमुना के मैदान में पला है और वहाँ से देश के दूसरे भागों में ले जाया गया।" उन्होनें इसकी कोई परिभाषा नहीं दी है किन्तु उन्होंने इसकी 6 विशेषतायेँ बताई है। ये विशेषतायेँ है– समाज का खंडात्मक विभाजन, संस्तरण, पेशे के अप्रतिबंधित चुनाव का अभाव, नागरिक एवं धार्मिक निर्योग्यताएं एवं विशेषाधिकार, भोजन तथा सामाजिक सहवास पर प्रतिबंध तथा विवाह संबंधी प्रतिबंध। मनु ने अपनी पुस्तक 'मनुस्मृति' में चार वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र के साथ साथ 50 जातियों के अस्तित्व को भी स्वीकार किया है लेकिन कहीं कहीं वे कहते है कि चारों वर्ण विभिन्न जातियों में विभक्त थे।

रोनाल्ड सीगल के अनुसार "यह जाति का व्यापक महत्व है जो अन्य किसी भी चीज से कहीं अधिक भारत का चरित्र – चित्रण करता है.... और भारत में जाति सार्वभौम है। यह व्यवहार में अत्यधिक हिन्दू है परंतु यह मात्र ऐसी नहीं है।" कोनिंग के अनुसार "जाति की प्रतिष्ठित भूमि भारत है।"

बोटोमोर ने उचित लिखा है कि "सामाजिक संस्तरण की प्रणालियों में भारतीय जाति व्यवस्था अप्रतिम है ऐसा कहने का तात्पर्य न तो यह है कि संस्तरण के अन्य स्वरूपों से यह पूर्णतः अतुलनीय है और न यह कि जाति के तत्व अन्यत्र कहीं नहीं मिलते है।"

कूले 10 के शब्दों में "जब कोई भी वर्ग पूर्णतः वंशानुक्रमण पर आधारित हो जाता है तो वह जाति कहलाता है।" मैकाइवर व पेज ने लिखा है "जाति व्यवस्था का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उदाहरण हिन्दू समाज में देखा जा सकता है। प्रत्येक

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

हिन्दू अपने पिता की जाति का सदस्य है, जिसमें उसे अन्त तक रहना है। संपत्ति की उपलब्धि अथवा प्रतिभा का प्रयोग उसकी स्थिति को बदल नहीं सकताद्य उसकी जाति के बाहर विवाह निषिद्ध है अथवा उसे निरुत्साहित किया जाता है।"

मजूमदार एवं मदान ने भी लिखा है कि "हिन्दू सामाजिक संरचना की सबसे अधिक चर्चित विशेषता जाति की संस्था है या, इसे अधिकतर जाति व्यवस्था कहा जाता है। विश्व के अन्य हिस्सों में भी जाति पाई जाती है, लेकिन भारत में जिस प्रकार की विशेषता पाई जाती है। वह अपनी कुछ अनूठी विशेषता द्वारा जानी जाती है, न की उन विशेषताओं द्वारा जो कि अन्यत्र जाति संरचनाओं में विद्धमान है।"

केतकर ने जाति की दो विशेषताओं के आधार पर इसे परिभाषित किया है 1.जन्म पर आधारित सदस्यता 2. अंतर्विवाह।

जाति व्यवस्था की उत्पत्ति के सिद्धांत– आज जाति प्रथा की उत्पत्ति के अनेक सिद्धांत प्रचलित है उनका वर्णन निम्न प्रकार है–

1. परंपरागत सिद्धांत– इसे हम दैवीय सिद्धांत भी कहते है। यह सिद्धांत हिन्दू धर्म ग्रंथों जैसे वेद, पुराण, उपनिषद, गीता, महाभारत और अनेक स्मृतियों पर आधारित है। उनके अनुसार जाति की उत्पत्ति ईश्वर की इच्छानुसार हुई है। ऋग्वेद के 'पुरुष सूक्त' में बताया गया है कि ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण की उत्पत्ति हुई है। उन्हें शिक्षण, पूजा और धार्मिक ग्रंथों का पठन–पठान का कार्य सौंपा गया। ब्रह्मा की भुजाओं से राजन्या (क्षत्रिय) की उत्पत्ति हुई, जिन्हे युद्ध कार्य सौंपा गया।

ब्रह्मा के उदर से वैश्य का जन्म हुआ, उन्हें व्यापार का कार्य सौंपा गया। ब्रह्मा के पैरों से शूद्रों का जन्म हुआ, उन्हें तीनों वर्णों की सेवा करने का कार्य दिया गया। इसके अलावा उस समय पाँचवाँ श्रेणी भी मौजूद थी जो मलमूत्र या मृत पशुओं को निकालने का कार्य किया करते थे। उन्हें 'अछूत' कहा जाता था। चार वर्णों में से ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य को 'द्विज' (दो बार जन्मा) और शूद्रों को एक 'जाति' कहा गया।

'भागवत गीता' में भगवान श्री कृष्ण ने बताया कि "व्यक्ति के गुण और कर्म के आधार पर ही मैंने जातियों की रचना की है।"

'मनु स्मृति' में मनु ने बताया कि जब चारों वर्णों ने अनुलोम विवाह का पालन नहीं किया, जिससे वर्णसंकरता की उत्पत्ति हुई और संकर संतानों ने अनेक जातियों को जन्म दिया, जो कालांतर में अनेक उच्च और निम्न जातियों में विभक्त् हो गए। भृगु ऋषि ने अपने ग्रंथ 'शांति पर्व' में बताया कि विश्व का निर्माण ब्रह्मा ने किया है। आगे चलकर यह विश्व व्यक्तियों के कार्यों और आवश्यकताओं के आधार पर यह अनेक जातियों में बँट गया।

भारतीय समाज में 'कर्म और पुनः जन्म का सिद्धांत' प्रचलित है, जो यह मानता है कि जो व्यक्ति अपने वर्तमान जन्म में अच्छें कर्म करता है, तो उसे उच्च जाति में जन्म लेना पड़ता है, यदि वे बुरे कर्म करता है, तो उसे निम्न जाति में जन्म लेना पड़ता है। उच्च जाति में जन्म लेना स्वर्ग और निम्न जाति में जन्म लेना नरक के समान माना जाता है।

आलोचना– यह सिद्धांत वैज्ञानिक नहीं है। यह पूरी तरह कल्पना पर आधारित है।

2. व्यावसायिक सिद्धांत– यह सिद्धांत सन 1885 में नेसफील्ड (Nesfield) ने दियाद्य ब्लंट और दलहमन ने इनके विचारों का समर्थन कियाद्य इनके अनुसार प्राचीन समय में व्यक्ति की आवश्यकताएं बहुत कम थी। धीरे धीरे जनसंख्या में वृद्धि होने लगी, जिससे नए–नए व्यवसायों का जन्म हुआद्य अच्छे और सम्मानित समझे जाने वाले व्यवसाय (यज्ञ, भजन–ध्यान, पूजा– पाठ, शिक्षण कार्य, व्यापार, सैन्य कार्य) करने वाले लोग उच्च जाति में तथा गंदे व्यवसाय (शिकार करना, सफाई कार्य,चमड़ा से संबंधित कार्य) अपनाने वाले लोग निम्न जातियों में बदल गए। व्यवसायों से जुड़ी श्रेष्ठता और हीनता की इसी भावना ने ही जाति व्यवस्था में संस्तरण पैदा कर दिया। धीरे–धीरे व्यवसाय वंशानुगत हो गए। इस प्रकार व्यावसायिक संघों (occupational guilds) का निर्माण हुआ और समय के साथ–साथ अनेक हजारों जातियां जैसे माली, कुम्हार, धौबी, नाई, कहार, सोनार, लुहार, चमार, गड़रिया और तेली अस्तित्व में आई। इन जाति विशेष के मध्य विवाह, खानपान, रहन सहन और सामाजिक संपर्कों में विभाजन बढ़ता चला गया।

डेंजिल इब्बेटसन ने जाति प्रथा की उत्पत्ति के लिए तीन कारकों को जिम्मेदार बताया है अ. जनजाति ब. संघ (guilds) स. धर्म। इन्होनें बताया कि जनजातियाँ पेशेवर संघों में विकसित हो गई। बाद में संघ धार्मिक कार्य करने लगे। कालांतर में ये संघ जातियों में परिवर्तित हो गए।

आलोचना– सेनार्ट ने उनकी आलोचना करते हुए कहा कि जब सभी लोग निश्चित व्यवसाय करते थे, तो अपनी जाति के नाम कैसे रखते थे। डी एन मजूमदार ने बताया कि व्यक्ति की प्रस्थिति जाति पर निर्भर न होकर रक्त की शुद्धता और समूहों की एकाकीपन की सीमा परनिर्भर करती है। वास्तव में पेशों में भी ऊँच–नीच की भावना पाई जाती है, तो यह भेदभाव क्यों पाया जाता है? वे इसका कारण नहीं बता सके।

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

3. प्रजातीय सिद्धांत– यह सिद्धांत हरवर्ट रिजले ने अपनी पुस्तक (पीपल ऑफ इंडिया) में दियाद्य डी. एन.मजूमदार, वैस्टरमार्क, एन के दत्त और जी एस घूरिए ने इनके विचारों का समर्थन किया। 2500 वर्ष ईसा पूर्व फारस (पर्शिया) देश से आर्य लोग भारत आए, जिनका भारत के मूल निवासियों अश्वेत द्रविड़ों से उनका सामना हुआ। आर्यों ने द्रविड़ों को पराजित कर उन्हें अपना दास बना लिया। तथा शारीरिक आवश्यकताओं और स्त्रियों की पूर्ति के लिए के लिए उन्होंने यहाँ के मूल निवासियों से वैवाहिक संबंध स्थापित किये। लेकिन उन्होंने अपनी लड़कियां उन्हें नहीं दी। इस प्रकार प्रतिलोम विवाह का प्रचलन हुआ। आर्य लोग पितृवंशीय थे और यहाँ के मूल निवासी मातृवशींय थे। उन्होंने यहाँ की आदिवासियों की लड़कियों से संबंध बनाए और उनसे उत्पन्न संतान चांडाल कहलाई। उनके अलावा समय–समय पर अनेक प्रजातियाँ भारत आई और यहाँ की संस्कृति में घुल मिल गई। इसी प्रजातीय मिश्रण और रक्त मिश्रण से अनेक जातियों की अस्तित्व में आई और इन जातियों ने अपने आपको अन्य जातियों से अलग कर लिया, जिससे उनमें रक्त की विशुद्धता बनी रह सके।

आलोचनाय– रिजले ने स्वयं स्वीकार किया है कि जाति प्रथा भारत से बाहर अमेरिका, कनाडा और मैक्सिको देशों में भी प्रचलित थी। इसलिए जाति के प्रजातीय सिद्धांत को पूरी तरह मान्य नहीं किया जा सकता है।

4. धार्मिक सिद्धांत– यह सिद्धांत होकार्ट और सेनार्ट ने दियाद्य होकार्ट (Hocart) ने कहा है कि हमें भारत में जाति की उत्पत्ति को समझने के लिए यहाँ के धार्मिक क्रियाओं और कर्मकांडों का अध्ययन करना पड़ेगा। हमारे देश में धर्म और देवी देवता का बहुत अधिक महत्व है। जब भारतीय समाज में यज्ञ, धार्मिक समारोह व उत्सव होते थे, लोगों का कुछ समूह मंत्र उच्चारण करते थे, जो ब्राह्मण कहलाये, जो बाल काटने का कार्य करते थे वे नाई कहलाये, जो मिट्टी के वर्तन बनाते थे वे कुम्हार कहलाये, फूल लाने वाले माली कहलाये, जो पानी की व्यवस्था करते थे वे कहार कहलाये, शुद्ध वस्त्र लाने और कपड़े धोने वाले धोबी कहलाये, तेल निकालने वाले तेली, पशुओं की बलि देने वाले लोग कसाई कहलाये। इस तरह लोगों के समूहों ने अपने आपको जातियों में बदल लिया और ये जातियाँ वंशानुगत हो गई तथा उनमें ऊँच–नीच का संस्तरण पैदा हो गया।

आलोचना– होकार्ट यह भूल गया कि जाति एक सामाजिक संस्था है, धार्मिक संस्था नहीं है, इसकिए धर्म को ही एक मात्र कारण मानना उनकी सबसे बड़ी भूल थी। इतना अवश्य है की धर्म जाति की उत्पत्ति में सहायक कारण हो सकता है। इसके अलावा होकार्ट ने कभी भी भारत आकर जाति प्रथा का अध्ययन नहीं किया।

सेनार्ट (Senart) के अनुसार हिन्दू धर्म में अनेक देवी देवता है। सभी लोगों की अपने कुल देवता की पूजा अर्चना के तरीके और उनको अर्पित किये गए भोजन एक दूसरे से अलग है। धीरे–धीरे लोगों ने इन प्रतिबंधों और निषेधों का प्रयोग अपने दैनिक जीवन जैसे सामाजिक सहवास, विवाह, खानपान, रहन–सहन और सामाजिक संपर्कों में करने लग गए। क्योंकि समान देवी–देवता में विश्वास करने के कारण ये दूसरे देवताओं के उपासक लोगों से अपने आपको उनसे भिन्न समझने लग गए। जिससे लोगों के ये समूह कालांतर में विभिन्न जातियों में विभक्त हो गए।

आलोचना– डालमैन कहते है कि सेनार्ट ने जाति प्रथा की उत्पत्ति को इतना सरल बना दिया है, कि यह वैज्ञानिक नहीं रह गई है। इसके अतिरिक्त सेनार्ट ने धार्मिक कारकों पर जरूरत से ज्यादा ध्यान दिया। इसके लिए अन्य कारक भी जिम्मेदार है। उन्होनें जाति और गोत्र में भ्रम पैदा कर दिया है।

5. ब्राह्मणवादी सिद्धांत– यह सिद्धांत अब्बे डूबाय (Abe Dubois) ने दिया। इस सिद्धांत के समर्थक भारतीय समाजशास्त्री जी.एस.घूरिए है। इसे राजनीतिक सिद्धांत भी कहते है। उन्होनें बताया कि जातियों की उत्पत्ति के पीछे ब्राह्मणों का स्वार्थ और उनकी दूसरों पर शासन करने की युक्तिपूर्ण योजना है। सबसे पहले आर्य प्रजाति के लोग भारत आए वे ब्राहमण, क्षत्रिय, और वैश्य आदि वर्णों में विभाजित थे तथा कर्मकांडों की पवित्रता के आधार पर आपस में विभाजित थे। इसके अलावा वे लोग द्रविड लोग को, जो भारत के मूल निवासी थे उन्हें दास समझकर उनके साथ शूद्रों के समान व्यवहार करते थे। प्रारंभ में तीनों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) में सामाजिक सहवास, विवाह, सामाजिक संपर्क, खानपान और व्यवसाय में कोई भी प्रतिबंध नहीं थेद्य धीरे–धीरे ब्राह्मणों को सबसे अधिक पवित्र मानकर उन्हें विशेषाधिकार दे दिए गए। ब्राह्मणों ने अपनी उच्च सामाजिक स्थिति को बनाए रखने के लिए उन्होंने अनुलोम विवाह और पवित्रता, अपवित्रता की धारणा को विकसित किया तथा अन्य वर्णों से खानपान और सामाजिक संपर्क पर प्रतिबंध लगा दिया। धीरे–धीरे उनके प्रतिबंधों का अनुसरण अन्य वर्णों ने भी किया। कालांतर में यही वर्ण धीरे–धीरे पवित्रता और अपवित्रता के आधार पर जातियों में बदल गए।

आलोचना– भारत में जाति व्यवस्था बहुत ही अतिप्राचीन संस्था है इसका निर्माण कृत्रिम रूप से नहीं हो सकता है। इसलिए विश्वास पूर्वक यह नहीं कहा जा सकता है कि जाति की उत्पत्ति के लिए एक मात्र कारण ब्राह्मणवादी सिद्धांत है। इतना अवश्य है जाति व्यवस्था निरन्तरता में इनका योगदान हो सकता है।

6. उद्विकासीय सिद्धांत– इस सिद्धांत के अनुसार आज जातियों का, जो वर्तमान स्वरूप हमें दिखाई देता है। वह हजारों साल के उद्विकासीय विकास क्रम का परिणाम है। प्राचीन समय में सबसे पहले भारत में फारस (पर्शिया) देश से आर्य

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- I, Issues-27, YEAR- Jan.-March-2023

प्रजाति के लोग भारत आए। उन्होंने यहाँ पहले से निवास कर रहें द्रविड लोगों को हरा कर उन्हें अपना दास बना लिया। इसके अलावा स्वयं आर्यों में अपनी उच्च सामाजिक प्रस्थिति को पाने के लिए आपस में संघर्ष होने लगा। लोगों के जिस समूह ने धार्मिक क्रियाओं पर अधिकार कर लिया, वे ब्राह्मण कहलाये, जिन्होनें प्रशासन पर अधिकार किया, वे क्षत्रिय कहलाए। जिन्होनें व्यापार पर अधिकार किया, वे वैश्य कहलाये और जिन्हे कुछ नहीं मिला, वे शूद्र कहलाए जो अन्य तीन वर्णों की सेवाये किया करते थे। धीरे–धीरे प्रत्येक वर्ण में भी उच्च नीच की भावना पनपने लगी। और वे जातियों में विभक्त जो गए। अब व्यक्ति अपनी जाति में ही विवाह (अन्तः विवाह) करने लगा और आज व्यक्ति जन्म के आधार समाज में पहचाना जाता है।

आलोचना– हट्टन का यह सिद्धांत सही नहीं है, क्योंकि व्यावसायिक संघ सभी देशों में पाए जाते है, फिर क्यों भारत में जाति प्रथा की उत्पत्ति हुई? अन्य दूसरे देशों में क्यों नहीं? जाति की उत्पत्ति के लिए एक कारण जिम्मेदार नहीं है, सहायक जरूर हो सकता हैद्य

7. हट्टन के अनुसार– भारत में जाति व्यवस्था आर्यों से आने से पूर्ण से ही मौजूद थी। आर्यों ने इसे समाज में लागू किया। भारत के मूल निवासी विदेशी और अजनवी लोगों से डरते थे, इसलिए उन्होंने उनसे खानपान, सामाजिक संपर्क, रहन सहन आदि बातों में सामाजिक दूरी बना ली। धीरे धीरे अनेक जातियों/उपजातियों का उदय हुआ।

8. डॉ0 भीम राव अंबेडकर का सिद्धांत– इन्होनें जाति की उत्पत्ति, बनावट और प्रसार के लिए जातियों के मध्य अन्तः विवाह को मुख्य कारण बताया है। डॉ अंबेडकर के अनुसार 'जाति स्वयं मर्यादित वर्ग है।' इनके अनुसार भारतीय जाति व्यवस्था एक शोषण करी संस्था है। और इसका एकमात्र हल यह की सभी जातियाँ दूसरी जातियों में विवाह करे। रक्त मिश्रण ही जाति प्रथा को दूर कर सकता है।

निष्कर्ष– इस प्रकार स्पष्ट कि अनेक समाजशास्त्रियों ने जाति की उत्पत्ति के संदर्भ में अनेक सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। लेकिन सभी समाजशास्त्री एक सर्वमान्य सिद्धांत नहीं दे सके। उन्होनें जाति की उत्पत्ति के कारणों की व्याख्या अपने –अपने ढंग से की है। फिर भी हम कह सकते है, कि जाति की उत्पत्ति समझने के लिए अब तक जो सिद्धांत बनाए गए है, वो काफी मददगार हो सकते है। भविष्य में इस संदर्भ में शोध किये जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सिंह, सौदान, और डॉ0 हरेन्द्र कुमार (2020), "भारतीय जाति व्यवस्थाओं के मूलभूत सिद्धांतों का अध्ययन", इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिएटिव रिसर्च थॉटस, वॉल्यूम 8 (issue 7 जुलाई 2020), पृष्ठ नं. 2185–2188.
2. घूरिए, जी0 एस0, कास्ट क्लास एण्ड ऑक्युपेशन पृ.सं 27.
3. कुमारी, कु. कृष्णा (2009), "अनुसूचित जाति की बदलती प्रस्थिति–अशिक्षा, गरीबी एवं सामाजिक भेदभाव के संदर्भ में:" एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, शोध प्रबंध MJPRU, पृ.सं. 8–17.
4. डॉ0 रवीन्द्रनाथ मुखर्जी और डॉ0 भरत अग्रवाल (2022), edited book, समाजशास्त्र, पृ. सं 24.
5. महाजन, धर्मवीर, और कमलेश महाजन, समाजशास्त्र, पृ. सं 179.

*****